राजनैतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक चिंतन का साप्ताहिक समाचार पत्र

शनि नेशनल्स टाइम्स

# प्रज्ञा

संस्करण : नई दिल्ली व पाली राज. 22 - 28 सितंबर 2011, वर्ष : 8, अंक : 42,
साप्ताहिक, मूल्य : 2 रुपये, वार्षिक सदस्यता शुल्कः 250/-

web : www.shanidham.in
www.facebook.com/ shreeshanidham

## शारदीय नवरात्र संवत् 2068 (28 सितंबर - 5 अक्टूबर 2011)

## घट स्थापना

आश्विन शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा 28 सितंबर को है। उसी दिन से शारदीय नवरात्रों का प्रारंभ होगा। प्रतिपदा को स्नान-ध्यानादि के बाद पात्र में शुद्ध मिट्टी में जौ, सप्तधान्यादि के बीज बोने चाहिए। उसके बाद पूजा गृह के सामने पुष्प-अक्षत डालकर वहां पर विधिपूर्वक कलश स्थापना की जाती है। प्रातः काल में कलश स्थापन का शुभमुहूर्त प्रारंभ हो जाता है जो किसी भी स्थिति में दोपहर के पहले हो जाना चाहिए।

# जय हो! जय हो! महिषासुरमर्दिनी भगवती दुर्गा की

## जिनके कृपा-कटाक्ष से होता है श्रद्धालुओं के सभी संकटों का शमन और अभिलाषाओं की पूर्ति

पूर्वकाल में देवताओं और असुरों में पूरे सौ वर्षों तक घोर संग्राम हुआ था। उसमें असुरों का स्वामी महिषासुर था और देवताओं के नायक इन्द्र थे। उस युद्ध में देवताओं की सेना महाबली असुरों से परास्त हो गयी। सम्पूर्ण देवताओं को जीतकर महिषासुर इन्द्र बन बैठा। तब पराजित देवता प्रजापति ब्रह्माजी को आगे करके उस स्थान पर गये, जहाँ भगवान शंकर और विष्णु विराजमान थे। देवताओं ने महिषासुर के प्राक्रम तथा अपनी पराजय का यथावत वृतान्त उन दोनों देवेश्वरों से विस्तार पूर्वक कह सुनाया। वे बोले - भगवन्! महिषासुर सूर्य, इन्द्र, अग्नि, वायु, चन्द्रमा, यम, वरुण तथा अन्य देवताओं के भी अधिकार छीनकर स्वयं ही सबका अधिष्ठाता बन बैठा है। उस दुरात्मा महिष ने समस्त देवताओं को स्वर्ग से निकाल दिया है। अब वे मनुष्यों की भाँति पृथ्वी पर विचरते हैं। दैत्यों की यह सारी करतूत हमने आप लोगों से कह सुनायी। अब हम आपकी ही शरण में आये हैं। उसके वध का कोई उपाय सोचिये।

इस प्रकार देवताओं के वचन सुनकर भगवान विष्णु और शिव ने दैत्यों पर बड़ा क्रोध किया। उनकी भौंहे तन गयीं और मुँह टेढ़ा हो गया। तब अत्यन्त कोप में भरे हुए चक्रपाणि श्री विष्णु के मुख से एक महान तेज प्रकट हुआ। शरीर से भी बड़ा भारी तेज निकला। वह सब मिलकर एक हो गया। महान तेज का वह पुंज जाज्वल्यमान पर्वत सा जान पड़ा। देवताओं ने देखा, वहाँ उसकी ज्वालाएँ

शेष पेज 15 पर

## व्रत-त्यौहार

24 सितंबर से 30 सितंबर तक (आश्विन कृष्ण द्वादशी से आश्विन शुक्ल चतुर्थी तक)

| दि. | वार | तिथि | नक्षत्र | चन्द्र राशि | विशेष |
|---|---|---|---|---|---|
| 24 | शनि | द्वादशी | श्लेषा | सिंह | इंदिरा एकादशी व्रत, श्राद्ध द्वादशी, संन्यासीनां श्राद्ध |
| 25 | रवि | त्रयोदशी | मघा | सिंह | प्रदोष व्रत, त्रयोदशी का श्राद्ध, मघा त्रयोदशी, मास शिवरात्रि व्रत |
| 26 | सोम | चतुर्दशी | पू.फा. | कन्या | शस्त्र, विष, दुर्घटना से मृतों का श्राद्ध |
| 27 | मंगल | अमा. | उ.फा. | कन्या | सर्वपितृ विसर्जन, अमावस का श्राद्ध, नाना का श्राद्ध, भौमवती अमावस्या |
| 28 | बुध | प्रतिपदा | हस्त | तुला | शरद् नवरात्र प्रारंभ, घटस्थापन प्रातःकाल, दुर्गा पूजा, अग्रसेन जयंती |
| 29 | गुरु | द्वितीया | चित्रा | तुला | भगवती ब्रह्मचारिणी, भगवती चंद्रघंटा पूजा |
| 30 | शुक्र | चतुर्थी | स्वा./विशाखा | वृश्चि. | भगवती कूष्मांडा पूजा |

## भगवती पूजा शारदीय नवरात्र संवत् 2068

| तिथि | दिनांक | वार | देवी |
|---|---|---|---|
| प्रतिपदा | 28 सितंबर 2011 | बुधवार | शैलपुत्री |
| द्वितीया/तृतीया | 29 सितंबर 2011 | गुरुवार | ब्रह्मचारिणी /चन्द्रघंटा |
| चतुर्थी | 30 सितंबर 2011 | शुक्रवार | कृष्मांडा |
| पंचमी | 01 अक्टूबर 2011 | शनिवार | स्कंदमाता |
| षष्ठी | 02 अक्टूबर 2011 | रविवार | कात्यायनी |
| सप्तमी | 03 अक्टूबर 2011 | सोमवार | कालरात्रि |
| अष्टमी | 04 अक्टूबर 2011 | मंगलवार | महागौरी |
| नवमी | 05 अक्टूबर 2011 | बुधवार | सिद्धिदात्री |

प्रज्ञा की संपूर्ण प्रस्तुति : श्री शनिधाम शिक्षा एवं शोध संस्थान, श्री शनिधाम ट्रस्ट , आसोला फतेहपुर बेरी, महरौली, नई दिल्ली। फोन : 26653500, 26654400, Web Site : www.shanidham.com E-mail: shaninationstimes@gmail.com

# नवरात्र में सिद्ध करें विशिष्ट साधना दुर्गा मंत्र की

दुर्गा सप्तशती में भगवती दुर्गा के सुन्दर इतिहास के साथ-साथ गूढ़ रहस्यों का भी वर्णन किया गया है। राजा सुरथ ने भी दुर्गा आराधना से ही अखण्ड साम्राज्य प्राप्त किया था। न जाने कितने की आर्त, अर्थार्थी, जिज्ञासु तथा मंत्र साधक माँ दुर्गा के सिद्ध मंत्र की साधना कर अपने मनोरथों को पूरा करने में सफलता प्राप्त कर चुके हैं। नवरात्रों अथवा ग्रहण काल में दुर्गा मंत्र की साधना कर आप भी अपने मनोरथ पूर्ण कर सकते हैं। यह मंत्र साधना सभी प्रकार के फल प्रदान करती है। ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः - यह आठ अक्षरों का भगवती दुर्गा का सिद्धि मंत्र है जिसका पाठ रक्तचन्दन की 108 दाने की माला से प्रतिदिन शुद्ध अवस्था में साधक को करना चाहिये।

साधना विधि - नवरात्र, सूर्य या चन्द्र ग्रहण के समय अथवा किसी भी शुभ मुहूर्त में इस साधना को करें। नवरात्र में पूरे 9 दिनों तक नियम के साथ दैनिक पूजन और मंत्र जप करें। ग्रहण काल में जितना समय ग्रहणकाल रहता है उतने ही समय तक मंत्र जाप साधना करनी चाहिये। नवरात्र के 9 दिनों की साधना में प्रतिदिन 27 माला जपने का विधान है। 9 दिनों में 24000 मंत्र जप के बाद 9वें दिन इसी मंत्र को पढ़ते हुए 108 बार आहुति देकर हवन करना चाहिये। इस प्रकार यह मंत्र सिद्ध हो जाता है। इस दुर्गा मंत्र का प्रभाव अचूक है।

यदि साधक ने 9 दिनों तक नियमित मंत्र जप और हवन की क्रिया पूरी कर ली तो वह कभी भी इस मंत्र को पढ़कर, दूब से जल छिड़कते हुये किसी की आपदाओं या बाधाओं का निवारण कर सकता है - चाहे कोई भी आर्थिक संकट हो, भूतादि ग्रहों की पीड़ा हो, प्रेत-पिशाच बाधा हो, दुर्भाग्य हो, नवग्रह पीड़ा हो, रोग अथवा बीमारी हो, शत्रु षडयंत्र की पीड़ा हो।

दुर्गाजी की प्रतिमा चित्र तथा श्री सिद्ध दुर्गा यंत्र जिसे नवार्ण मंत्र से प्रतिष्ठित किया गया हो। उसे लाल रंग के शुद्ध रेशमी कपड़े पर आसीन करके स्नान करायें। लाल चंदन, पुष्प, दीप व नैवेद्य अर्पित करें, फिर दुर्गाजी की स्तुति और ध्यान करें -

अध्यारूढ़ां मृगेन्द्रं
सजल जलधर श्यामलां हस्त पद्मां।
शूलं वाणं कृपाणं
त्वसि जलज गदा चाप पाशान् वहन्ती।
चंद्रोतंशां त्रिनेत्रां
चितसृणिरसिमाखेटं विभ्रतीभिः। कन्याभिः
सेव्यमाना
प्रतिभट भयदां शूलिनीं भावयामः॥

ध्यान स्तुति के बाद परम तन्मय भाव से उपर्युक्त सिद्ध दुर्गा मंत्र का जाप करे। सिद्ध दुर्गा साधना के लिये सर्वप्रथम शुद्ध स्थान पर आसन बिछाकर, पूजा की सारी सामग्री पहले से वहां रख लें। ताम्र पत्र अथवा भोजपत्र पर रचित श्री सिद्ध दुर्गा यंत्र काठ के पीढ़े पर एक कपड़ा बिछाकर उस पर स्थापित करें। यंत्र तथा मूर्ति अथवा चित्र जो भी हो उसकी रक्त चंदन, पुष्प, अक्षत, धूप-दीपादि से पूजा करके रक्त चंदन की 108 दाने की माला से दुर्गा अष्टाक्षर मंत्र का 27 माला जप करें। जप के समय घी का दीपक दुर्गाजी के सम्मुख जलाये। विकल्प के रूप में मीठे तेल के दीपक से भी काम चलाया जा सकता है। इस उपासना के लिये ऊनी आसन का ही प्रयोज्य होता है। माला लाल चंदन की, कुशाग्रंथि की अथवा रुद्राक्ष की भी ले सकते हैं। रक्त चंदन की माला सर्वश्रेष्ठ होती है। जप के लिये अर्द्धरात्रि का समय उत्तम होता है।

मंत्र जप समाप्त होने पर पूजा से उठने के पूर्व क्षमा याचना करते हुये दुर्गा जी की स्तुति पढ़नी चाहिये। स्तुति पढ़ने या याद करने में असुविधा हो तो केवल श्री दुर्गायै नमः का सात बार जप करके देवी की प्रतिमा को क्षमा याचना हेतु प्रणाम करना चाहिये। मंत्र जप हो जाने पर कभी भी, किसी भी प्रकार प्रतिकूलता के शमन की आवश्यकता पड़ने पर इसे पढ़ते हुए उस पर विजय प्राप्त की जा सकती है।

दशाक्षर दुर्गा मंत्र साधना

दुर्गा जी की सिद्ध साधनाओं में एक यह भी बहुत प्रसिद्ध और प्रभावशाली मंत्र साधना है। दस अक्षरों से रचित होने के कारण दशाक्षर मंत्र कहलाता है।

मंत्र - ॐ दुर्गे दुर्गे रक्षिणि ठः ठः स्वाहा।

साधना विधि - किसी भी शुभ मुहूर्त में यह साधना आरंभ की जा सकती है। दुर्गा जी की प्रतिमा, या चित्र का पूजन करके नित्य इस मंत्र का जप सिद्धि के लिये एक लाख पच्चीस हजार 40 दिन में है। परन्तु नवरात्रों में 9 दिन में 24,000 मंत्र तथा ग्रहण काल में 40 माला का जप ही पर्याप्त होता है। जप से पहले दुर्गा जी की पंचोपचार, अष्टोपचार अथवा षोडोशोपचार पूजा करके, अंगन्यास, करन्यास, हृदयादिन्यास करना चाहिये। आज के युग में व्यक्ति इतना स्थिर और क्लांत है कि वह शास्त्रीय पद्धति से जटिल साधनाएं नहीं कर सकता। ऐसी स्थिति में साधक श्रद्धा भाव से, देवी जी की साधना को निर्विघ्नता, सुरक्षा, शांति और सफलता प्राप्ति के लिये अपनी भाषा में मौन निवेदन कर ले, तो भी अवश्य कल्याण होता है। परन्तु सविधि जप अनुष्ठान उत्तम होगा।

करन्यास -

ॐ दुर्गे अंगुष्ठाभ्यां नमः।
(मंत्र पढ़ते हुये अंगुष्ठ का स्पर्श करें।)
ॐ दुर्गे तर्जनीभ्यां स्वाहा।
(मंत्र पढ़ते हुये तर्जनी का स्पर्श करें।)
ॐ दुर्गे मध्यमाभ्यां वौषट्।
(मंत्र पढ़ते हुए मध्यमा का स्पर्श करें।)
ॐ भूरक्षिणी अनामिकाभ्यां हुँ।
(मंत्र पढ़ते हुए अनामिका का स्पर्श करें।)
ॐ दुर्गे दुर्गे रक्षिणी अस्त्राय फट्।
(मंत्र पढ़ते हुये कनिष्ठिका का स्पर्श करें।)

शास्त्रीय पद्धति यह है कि प्रत्येक साधन में सभी न्यास अंगन्यास, कर हृदय आदि न्यास अवश्य किये जायें। यह नियमावली इतनी जटिल है कि सामान्य गृहस्थ जो प्रायः अशिक्षित या अल्प शिक्षित होता है। यह न्यासादि की बाध्यता को पूरी नहीं कर सकता।

गुरु तथा देवी के चरणों में अपने आपको पूर्ण रूप से समर्पित कर दे और क्रियाओं को न कर मानसिक रूप से क्षमा प्रार्थना करते हुए जप की प्रक्रिया आरंभ करे। अर्थात यदि अपने शब्दों में देवता की स्तुति करके, निर्विघ्न साधना के लिये प्रार्थना कर ली जाये और शुद्ध पवित्र स्थान पर एकाग्रचित बैठकर मंत्र, का जप किया जा सके, तो भी साधना फलीभूत होती है। वस्तुतः देवता श्रद्धा ही चाहते हैं शेष सभी उपचारों का उनकी दृष्टि में कोई महत्व नहीं। वास्तव में न्यासादि शारीरिक क्रियायें हैं - यह योग साधन के संक्षिप्त रूप हैं, इनसे शारीरिक व मानसिक संतुलन और शुचिता की स्थिति बनी रहती है।

इस दुर्गा साधना में प्रयुक्त होने वाले श्री सिद्ध दुर्गा यंत्र को दुर्गा जी के चित्र या प्रतिमा के साथ स्थापित कर लें और फिर रक्त चंदन की माला से मंत्र जप आरंभ करे दें। मंत्र जप की समाप्ति पर पुनः दुर्गा स्तुति अथवा श्री दुर्गायै नमः का ग्यारह बार जप करके प्रणाम करना चाहिये।

# क्या करें, क्या न करें नवरात्रों में

1. नवरात्र में नौ इन्द्रियों को पवित्र करें। उसके लिए प्रतिदिन उपवास करें और जगदंबा महामाया की पूजा करें।

2. व्रत करने वाले को धरती पर सोना चाहिए।

3. एक समय सायं काल फलाहार करें।

4. पूर्ण रूप से ब्रह्मचर्य का पालन करें।

5. संकल्प करें कि हमेशा क्षमा, दया और उदारता का भाव रखेंगे।

6. असत्य मार्ग छोड़कर सत्य मार्ग पर चलें।

7. अपनी सामर्थ्य के अनुसार गरीबों की मदद करें।

8. दुर्गा सप्तशती का पाठ करें और अंतिम दिन जगदंबा महामाया का दुर्गा सप्तशती के अनुसार हवन करायें।

9. गृहस्थ आश्रम में रहते हुए भी संन्यासी की तरह जीवन-चर्या अपनाएं अर्थात जमीन पर या लकड़ी के तख्त पर शयन करें।

10. कम से कम बोलने का प्रयत्न करें। अपशब्दों का प्रयोग न करें।

11. हरिवंश पुराण के आधार पर वैदिक मंत्रों का पाठ करें।

12. नव इंद्रियों में एक इन्द्री का संबंध माता-पिता से होता है। इसलिए माता-पिता को हर संभव सहायता करने का संकल्प करें।

13. घर में सभी लोग सात्विक भोजन करें।

14. अपवित्र आचार-विचार और कुसंगति से बचें

15. नव दुर्गा मंदिर में भगवती की पूजा आराधना करें। अगर समय हो तो मंदिर में साफ-सफाई व अन्य व्यवस्था में सहयोग करें।

# देवी-माहात्म्य : मधु-कैटभ प्रसंग

भगवती दुर्गाकी आराधना का सर्वोत्तम अवसर नवरात्र हैं जिसके हर दिन भगवती के नवीन स्वरूपों की पूजा-अर्चना होती है और जप-पाठ आदि के धार्मिक अनुष्ठान आयोजित होते हैं। श्रद्धालु भक्त भगवती के नव स्वरूपों की पूजा कर कृतार्थ होते हैं और देवी की अनुकपा से उनके सभी मनोरथ पूरे होते हैं। चाहे कोई भी संकट हों, विघ्न-बाधाओं के बादल प्रलय ढाने को तैयार हों, ग्रहों के प्रतिकूल प्रभाव हों - हर प्रकार की कठिनाइयां भगवती दुर्गा के आशीर्वाद से दूर हो जाती हैं। यही वजह है कि सनातन काल से लोग भगवती की नवरात्रों में विशेष पूजा किया करते हैं। नवरात्र के अवसर पर प्रस्तुत हैं माकण्डेय पुराण से संकलित देवी माहात्म्य को रेखांकित करने वाली प्रथम चरित्र-कथा जिसमें भगवती ने मधु कैटभ दैत्य का संहार किया था। कौष्टुकि मुनि के पूछने पर महर्षि मार्कण्डेय जी ने उन्हें श्री शनिदेव के भ्राता सावर्णि मनु की उत्पत्ति का प्रसंग सुनाने के बाद उनके मन्वंतर के स्वामी बनने का आख्यान सुनाने के क्रम में भगवती के प्रथम चरित्र का भी गान किया।

मार्कण्डेय जी बोले - सूर्य के पुत्र साविर्णि जो आठवें मनु कहे जाते हैं, उनकी उत्पत्ति की कथा विस्तार पूर्वक कहता हूँ, सुनो। सूर्य कुमार महाभाग सवर्णि भगवती महामाया के अनुग्रह से जिस प्रकार मन्वन्तर के स्वामी हुए, वही प्रसंग सुनाता हूँ। पूर्वकाल की बात है,स्वारोचिष मन्वन्तर में सुरथ नाम के एक राजा थे, जो चैत्र वंश में उत्पन्न हुए थे। उनका समस्त भूमण्डल पर अधिकार था । वे प्रजा का अपने और पुत्रों की भाँति धर्मपूर्वक पालन करते थे। फिर भी उस समय कोलाविध्वंसी नाम के क्षत्रिय उनके शत्रु हो गये। राजा सुरथ की दण्डनीति बड़ी प्रबल थी। उनका शत्रुओं के साथ संग्राम हुआ। यद्यपि कोलाविध्वंसी संख्या में कम थे, तो भी राजा सुरथ युद्ध में उनसे परास्त हो गये। तब वे युद्ध भूमि से अपने नगर को लौट आये और केवल अपने देश के राजा होकर रहने लगे (समूची पृथ्वी से अब उनका अधिकार जाता रहा) किंतु वहाँ भी उन प्रबल शत्रुओं ने उस समय महाभाग राजा सुरथ पर आक्रमण कर दिया।

राजा का बल क्षीण हो चला था, इसलिये उनके दुष्ट, बलवान एवं दुरात्मा मंत्रियों ने वहाँ उनकी राजधानी में भी राजकीय सेना और खजाने को वहाँ से हथिया लिया। सुरथ का प्रभुत्व नष्ट हो चुका था, इसलिये वे शिकार खेलने के बहाने घोड़े पर सवार हो वहाँ से अकेले ही एक घने जंगल में चले गये। वहाँ उन्होंने विप्रवर मेधा मुनि का आश्रम देखा, जहाँ कितने ही हिसंक जीव (अपनी स्वाभाविक हिंसावृत्ति छोड़कर) परम शान्त भाव से रहते थे। मुनि के बहुत से शिष्य उस वन की शोभा बढ़ा रहे थे। वहां जाने पर मुनि ने उनका सत्कार किया और वे उन मुनि श्रेष्ठ के आश्रम पर इधर-उधर विचरते हुए कुछ काल तक वहां रहे। फिर ममता से आकृष्टचित्त होकर उस आश्रम में इस प्रकार चिंता करने लगे - पूर्वकाल में मेरे पूर्वजों ने जिसका पालन किया था, वहीं नगर आज मुझसे रहित है। पता नहीं, मेरे दुराचारी भृत्यगण उसकी धर्मपूर्वक रक्षा करते हैं या नहीं। जो सदा मद की वर्षा करने वाला और शूरवीर था, वह मेरा प्रधान हाथी अब शत्रुओं के अधीन होकर न जाने किन भोगों को भोगता होगा? जो लोग मेरी कृपा, धन और भोजन पाने से सदा मेरे पीछे-पीछे चलते थे, वे निश्चय ही अब दूसरे राजाओं को अनुसरण करते होंगे। उन अपव्ययी लोगों के द्वारा खर्च होते रहने के कारण अत्यन्त कष्ट से जमा किया हुआ मेरा वह खजाना भी खाली हो जायेगा। ये तथा और भी कई बातें राजा सुरथ निरंतर सोचते रहते थे।

एक दिन उन्होंने वहाँ विप्रवर मेधा के आश्रम के निकट एक वैश्य को देखा और उससे पूछा - भाई, तुम कौन हो? यहां तुम्हारे आने का क्या कारण है? तुम क्यों शोकग्रस्त और अनमने से दिखायी देते हो? राजा सुरथ का यह प्रेम पूर्वक कहा हुआ वचन सुनकर वैश्य ने विनीत भाव से उन्हें प्रणाम करके कहा - राजन्! मैं धनियों के कुल में उत्पन्न एक वैश्य हूँ। मेरा नाम समाधि है। मेरे दुष्ट स्त्री-पुत्रों ने धन के लोभ से मुझे घर से बाहर निकाल दिया है। मैं इस समय धन, स्त्री और पुत्र से वंचित हूँ। मेरे विश्वसनीय बंधुओं ने मेरा ही धन लेकर मुझे दूर कर दिया है, इसलिये दुखी होकर मैं वन में चला आया हूँ। यहाँ रहकर मैं इस बात को नहीं जानता कि मेरे पुत्रों की, स्त्री की और स्वजनों का कुशल है या नहीं। इस समय घर में वे कुशल से रहते हैं, अथवा उन्हें कोई कष्ट है? वे मेरे पुत्र कैसे हैं? क्या वे सदाचारी हैं अथवा दुराचारी हो गये हैं?

राजा ने पूछा - जिन लोभी स्त्री-पुत्र आदि ने धन के कारण तुम्हें घर से निकाल दिया, उनके प्रति तुम्हारे चित्त में इतना स्नेह क्यों है?

वैश्य बाला - आप मेरे विषय में जो बात कहते हैं, वह सब ठीक है। किंतु क्या करूँ, मेरा मन निष्ठुरता नहीं धारण करता। जिन्होंने धन के लोभ में पड़कर पिता के प्रति स्नेह, पति के प्रति प्रेम तथा आत्मीयजन के प्रति अनुराग को तिलाञ्जलि दे मुझे घर से निकाल दिया है, उन्हीं के प्रति मेरे हृदय में इतना स्नेह है। महामते, गुणहीन बन्धुओं के प्रति भी जो मेरा चित्त इस प्रकार प्रेम मग्न हो रहा है, यह क्या है - इस बात को मैं जानकर भी नहीं जान पाता। उनके लिये मैं लंबी साँसें ले रहा हूँ और मेरा हृदय अत्यन्त दुःखित हो रहा है। उन लोगों में प्रेम का सर्वथा अभाव है, तो भी उनके प्रति जो मेरा मन निष्ठुर नहीं हो पाता, इसके लिये क्या करूँ।

मार्कण्डेयजी कहते हैं - तदन्तर राजाओं में श्रेष्ठ सुरथ और वह समाधि नामक वैश्य दोनों साथ-साथ मेधा मुनि की सेवा में उपस्थित हुए और उनके साथ यथायोग्य न्यायानुकूल विनयपूर्ण बर्ताव करके बैठे। तत्पश्चात वैश्य और राजा ने कुछ वार्तालाप आरंभ किया।

राजा ने कहा - भगवन् मैं आपसे एक बात पूछना चाहता हूँ, उसे बताइये। मेरा चित्त अपने अधीन न होने के कारण वह बात मेरे मन को बहुत दुःख देती है। मुनिश्रेष्ठ जो राज्य मेरे हाथ से चला गया है, उसमें और उसके सम्पूर्ण अंगों में मेरी ममता हो रही है। यह जानते हुए भी कि वह अब मेरा नहीं है, अज्ञानी की भाँति मुझे उसके लिये दुःख होता है, यह क्या है? इधर यह वैश्य भी घर से अपमानित होकर आया है। इसके पुत्र, स्त्री और भृत्यों ने इसको छोड़ दिया है। स्वजनों ने भी इसका परित्याग कर दिया है, तो भी इसके हृदय में उनके प्रति अत्यन्त स्नेह है। इस प्रकार यह तथा मैं दोनों ही बहुत दुखी हैं। जिसमें प्रत्यक्ष दोष देखा गया है, उस विषय के लिये भी हमारे मन में ममता जनित आकर्षण पैदा हो रहा है। महाभाग हम दोनों समझदार है,तो भी हममें जो मोह पैदा हुआ है, यह क्या है? विवेकशून्य पुरुष की भाँति मुझमें और इसमें भी यह मूढ़ता प्रत्यक्ष दिखायी देती है।

ऋषि बोले - महाभाग, विषय मार्ग का ज्ञान सब जीवों को है। इसी प्रकार विषय भी सबके लिये अलग-अलग हैं। कुछ प्राणी दिन में नहीं देखते, और दूसरे रात में ही नहीं देखते। तथा कुछ जीव ऐसे हैं, जो दिन और रात्रि में भी बराबर ही देखते हैं। यह ठीक है कि मनुष्य समझदार होते हैं, किंतु केवल वे ही ऐसे नहीं होते। पशु-पक्षी और मृग आदि सभी प्राणी समझदार होते हैं। मनुष्यों की समझ भी वैसी ही होती है, जैसी उन मृग और पक्षियों की होती है तथा जैसी मनुष्यों की होती है, वैसी ही उन मृग-पक्षी आदि की होती है। यह तथा अन्य बातें भी प्रायः दोनों में समान ही हैं। समझ होने पर भी इन पक्षियों को तो देखो, यह स्वयं भूख से पीड़ित होते हुए भी मोहवश बच्चों की चोंच में कितने चाव से अन्न के दाने डाल रहे हैं। नरश्रेष्ठ, क्या तुम नहीं देखते कि ये मनुष्य समझदार होते हुए भी लोभवश अपने किये हुए उपकार का बदला पाने के लिये पुत्रों की अभिलाषा करते हैं? यद्यपि उन सबमें समझ की कमी नहीं है, तथापि वे संसार की स्थिति (जन्म-मरण की परम्परा) बनाये रखने वाले भगवती महामाया के प्रभाव द्वारा ममतामय भँवर से युक्त मोह के गहरे गर्त में गिराये जाते हैं। इसलिये इसमें आश्चर्य नहीं करना चाहिये। जगदीश्वर भगवान विष्णु की योगनिद्रारूपा जो भगवाती

महामाया हैं, उन्हीं से यह जगत मोहित हो रहा है। वे भगवती महामाया देवी ज्ञानियों के भी चित्त को बलपूर्वक खींचकर मोह में डाल देती हैं। वे ही इस संपूर्ण चराचर जगत की सृष्टि करती हैं तथा वे ही प्रसन्न होने पर मनुष्यों को मुक्ति के लिये वरदान देती हैं। वे ही पराविद्या, संसार-बंधन और मोक्ष की हेतुभूता सनातनी देवी तथा संपूर्ण ईश्वरों की भी अधीश्वरी हैं।

राजा ने पूछा - भगवन, जिन्हें आप महामाया कहते हैं, वे देवी कौन हैं? ब्रह्मन्! उनका अविर्भाव कैसे हुआ? तथा उनके चरित्र कौन-कौन हैं ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ महर्षे, उन देवी का जैसा प्रभाव हो, जैसा स्वरूप हो और जिस प्रकार प्रादुर्भाव हुआ हो, वह सब मैं आपके मुख से सुनना चाहता हूँ।

ऋषि बोले - राजन्! वास्तव मे तो वे देवी नित्यस्वरूपा ही हैं। सम्पूर्ण जगत् उन्हीं का रूप है तथा उन्होंने समस्त विश्व को व्याप्त कर रखा है, तथापि उनका प्राकट्य अनेक प्रकार से होता है। वह मुझ से सुनो। यद्यपि वे नित्य और अजन्मा हैं, तथापि जब देवताओं को कार्य सिद्ध करने के लिये प्रकट होती हैं, उस समय लोक में उत्पन्न हुई कहलाती हैं। कल्प के अन्त में जब सम्पूर्ण जगत् एकार्णव में निमग्न हो रहा था और सबके प्रभु भगवान विष्णु शेषनाग की शय्या बिछाकर योगनिद्रा का आश्रय ले सो रहे थे, उस समय उनके कानों की मैल से दो भयंकर असुर उत्पन्न हुए, जो मुध और कैटभ के नाम से विख्यात थे। वे दोनों ब्रह्मा जी का वध करने को तैयार हो गये।

भगवान विष्णु के नाभिकमल में विराजमान प्रजापति ब्रह्माजी ने जब उन दोनों भयानक असुरों को अपने पास आया और भगवान को सोया हुआ देखा तो एकाग्रचित्त होकर उन्होंने भगवान विष्णु को जगाने के लिए उनके नेत्रों में निवास करने वाली योगनिद्रा का स्तवन आरम्भ किया। जो इस विश्व की अधीश्वरी, जगत को धारण करने वाली, संसार का पालन और संहार करने वाली तथा तेजःस्वरूप भगवान विष्णु की अनुपम शक्ति हैं, उन्हीं भगवती निद्रादेवी की भगवान ब्रह्मा स्तुति करने लगे।

ब्रह्मा जी ने कहा - देवि तुम्हीं स्वाहा, तुम्हीं स्वधा और तम्ही वषट्कार हो। स्वर भी तुम्हारे ही स्वरूप हैं। तुम्हीं जीवनदायिनी सुधा हो। नित्य अक्षर प्रणव में अकार, उकार, मकार - इन तीन मात्राओं के रूप में तुम्हीं स्थित हो तथा इन तीन मात्राओं के अतिरिक्त जो बिन्दुरूपा नित्य अर्धमात्रा है, जिसका विशेष रूप से उच्चारण नहीं किया जा सकता, वह भी तुम्हीं हो। देवि! तुम्हीं संध्या, सावित्री तथा परम जननी हो। देवि! तुम्हीं इस विश्व ब्रह्माण्ड को धारण करती हो। तुम से ही इस जगत की सृष्टि होती है। तुम्हीं से इसका पालन होता है और सदा तुम्हीं कल्प के अंत में सबको अपना ग्रास बना लेती हो।

जगन्मयी देवि! इस जगत की उत्पत्ति के समय तुम सृष्टिरूपा हो, पालन-काल में स्थितिरूपा हो तथा कल्पान्त के समय संहाररूप धारण करने वाली हो। तुम्हीं महाविद्या, महामाया, महामेधा, महास्मृति, महामोह रूपा, महादेवी और महासुरी हो। तुम्हीं तीनों गुणों को उत्पन्न करने वाली सबकी प्रकृति हो। भयंकर कालरात्रि, महारात्रि और मोहरात्रि भी तुम्हीं हो। तुम्हीं श्री, तुम्हीं ईश्वरी, तुम्हीं ह्रीं और तुम्हीं बोधस्वरूपा बुद्धि हो। लज्जा, पुष्टि, तुष्टि, शान्ति और क्षमा भी तुम्हीं हो। तुम खड्गधारिणी, शूलधारिणी, घोररूपा तथा गदा, चक्र, शंख और धनुष धारण करने वाली हो। बाण, भुशुण्डी और परिघ - ये भी तुम्हारे अस्त्र हैं। तुम सौम्य और सौम्यतर हो - इतना ही नहीं, जितने भी सौम्य एवं सुन्दर पदार्थ हैं, उन सबकी अपेक्षा तुम अत्याधिक सुन्दरी हो। पर और अपर - सबसे परे रहने वाली परमेश्वरी तुम्हीं हो।

सर्वस्वरूपे देवि! कहीं भी सत्-असत् रूप जो कुछ वस्तुएँ हैं और उन सबकी जो शक्ति है, वह तुम्हींहो। ऐसी अवस्था में तुम्हारी स्तुति क्या हो सकती है। जो इस जगत की सृष्टि, पालन और संहार करते हैं, उन भगवान को भी जब तुमने निद्रा के अधीन कर दिया है तो तुम्हारी स्तुति करने में यहाँ कौन समर्थ हो सकता है। मुझको, भगवान शंकर को तथा भगवान विष्णु को भी तुमने ही शरीर धारण कराया है। अतः तुम्हारी स्तुति करने की शक्ति किसमें है। देवि! तुम तो अपने इन उदार प्रभावों से ही प्रशंसित हो। ये जो दोनों दुर्घर्ष असुर मधु और कैटभ हैं, इनको मोह में डाल दो और जगदीश्वर भगवान विष्णु को शीघ्र ही जगा दो। साथ ही इनके भीतर इन दोनों महान असुरों को मार डालने की बुद्धि उत्पन्न कर दो।

ऋषि कहते हैं - राजन्! जब ब्रह्मा जी ने वहाँ मधु और कैटभ को मारने के उद्देश्य से भगवान विष्णु को जगाने के लिए तमोगुण की अधिष्ठात्री देवी योगनिद्रा की इस प्रकार स्तुति की, तब वे भगवान के नेत्र, मुख, नासिका, बाहु, हृदय और वक्ष स्थल से निकलकर अव्यक्तजन्मा ब्रह्माजी की दृष्टि के समक्ष खड़ी हो गयी।

योगनिद्रा से मुक्त होने पर जगत के स्वामी भगवान जनार्दन उस एकावर्णव के जल में शेषनाग की शय्या से जाग उठे। फिर उन्होंने उन दोनों असुरों को देखा। वे दुरात्मा मधु और कैटभ अत्यन्त बलवान तथा परक्रमी थे और क्रोध से आँखें लाल किये ब्रह्माजी को खा जाने के लिये उद्योग कर रहे थे। तब भगवान श्री हरि ने उठकर उन दोनों के साथ पाँच हजार वर्षों तक केवल बाहु युद्ध किया। वे दोनों भी अत्यन्त बल के कारण उन्मत्त हो रहे थे। इधर महामाया ने भी उन्हें मोह में डाल रखा था, इसलिये वे भगवान विष्णु से कहने लगे - हम तुम्हारी वीरता से संतुष्ट हैं। तुम हम लोगों से कोई वर माँगो।

श्री भगवान् बोले - यदि तुम दोनों मुझ पर प्रसन्न हो तो अब मेरे हाथ से मारे जाओ। बस, इतना सा ही मैंने वर माँगा है। यहाँ दूसरे किसी वर से क्या लेना है।

ऋषि कहते हैं - इस प्रकार धोखे में आ जाने पर जब उन्होंने सम्पूर्ण जगत में जल ही जल देखा तब कमलनयन भगवान से कहा - जहाँ पृथ्वी जल में डूबी हुई न हो जहाँ सूखा स्थान हो, वहीं हमारा वध करो।

ऋषि कहते हैं- तब तथास्तु कहकर शंख, चक्र और गदा धारण करने वाले भगवान ने उन दोनों के मस्तक अपनी जाँघ पर रखकर चक्र से काट डाले। इस प्रकार ये देवी महामाया ब्रह्माजी की स्तुति करने पर स्वयं प्रकट हुई थीं।

# भगवती दुर्गा के नव स्वरूपों की उपासना से होता है भक्तों का हर मनोरथ पूरा

## ॐ शैलपुत्री देव्यै नमः

सभी मनोकामनाओं को पूर्ण करने के लिए नवरात्र के पावन पर्व में पूजी जाने वाली नौ दुर्गाओं में सर्व प्रथम भगवती शैल पुत्री का नाम आता है। मां दुर्गा ने देवासुर संग्राम में प्रथम दिन शैल पुत्री का रूप धारण कर असुरों का संहार किया था। पर्व के पहले दिन बैल पर सवार भगवती मां के पूजन-अर्चना का विधान है। मां के दाहिने हाथ में कमल पुष्प सुशोभित है। अपने पूर्वजन्म में ये दक्ष प्रजापति की कन्या के रूप में पैदा हुई थीं। उस समय इनका नाम सती रखा गया। इनका विवाह शंकर जी से हुआ था। शैलपुत्री देवी समस्त शक्तियों की स्वामिनी हैं। योगी और साधकजन नवरात्र के पहिले दिन अपने मन को मूलाधार चक्र में स्थित करते हैं और योग साधना का यहीं से प्रारंभ होना कहा गया है। निम्नलिखित साधना-विधान द्वारा कोई भी साधक अभीष्ट फल प्राप्त कर सकता है।

साधना विधि -

सबसे पहले मां शैलपुत्री की मूर्ति अथवा तस्वीर स्थापित करें और उसके नीचें लकड़ी की चौकी पर लाल वस्त्र बिछायें। इसके ऊपर केशर से 'शं' लिखें और उसके ऊपर मनोकामना पूर्ति गुटिका रखें। तत्पश्चात् हाथ में लाल पुष्प लेकर शैलपुत्री देवी का ध्यान करें। मंत्र इस प्रकार है -

वंदे वांछित लाभाय चद्रार्धकृत शेखरम्।
वृषाश्रढा शूलधरां शैलपुत्री यशस्विनीम्॥

मंत्र के साथ ही हाथ के पुष्प मनोकामना गुटिका एवं मां के तस्वीर के ऊपर छोड़ दें। तत्पश्चात् मनोकामना गुटिका का पंचोपचार द्वारा पूजन करें। दीप प्रज्वलित करके ही पूजन करें। यदि संभव हों तो नौ दिनों तक अखण्ड ज्योति जलाने का विशेष महत्व होता है। इसके बाद भोग प्रसाद अर्पित करें तथा मां शैलपुत्री के मंत्र का जाप करें। संख्या 108 होनी चाहिए। मंत्र - ॐ शं शैलपुत्री फट् मंत्र संख्या पूर्ण होने के बाद मां के चरणों में अपनी मनोकामना को व्यक्त करके मां से प्रार्थना करें तथा श्रद्धा से आरती कीर्तन करें।

## ॐ ब्रह्मचारिणी देव्यै नमः

नवरात्र के दूसरे दिन भगवती मां ब्रह्मचारिणी की पूजा, अर्चना का विधान है। साधक एवं योगी इस दिन अपने मन को भगवती मां के श्री चरणों मे एकाग्रचित करके स्वाधिष्ठान चक्र में स्थित करते हैं और मां की कृपा प्राप्त करते हैं। ब्रह्म शब्द का तात्पर्य (तपस्या)। ब्रह्मचारिणी का तात्पर्य तप का आचरण करने वाली ब्रह्म-चारिणी देवी का स्वरूप ज्योतिर्मय एवं महान है। मां के दाहिने हाथ में जप माला एवं बायें हाथ में कमंडल सुशोभित रहता है। अपने पूर्व जन्म में वे हिमालय (पर्वतराज) के घर कन्या रूप में प्रकट हुई थीं। तब इन्होंने देवर्षि नारद जी के उपदेशानुसार कठिन तपस्या करके भगवान शंकर को अपने पति के रूप में प्राप्त किया था।

मां ब्रह्मचारिणी की उपासना से मनोरथ सिद्धि, विजय एवं निरोगता की प्राप्ति होती है तथा मां के निर्मल स्वरूप के दर्शन प्राप्त होते हैं। प्रेम युक्त की गयी भक्ति से साधक का सर्व प्रकार से दुःख-दारिद्र का विनाश एवं सुख-सौभाग्य की प्राप्ति होती है।

साधना विधान - मां ब्रह्मचारिणी की प्रतिमा या तस्वीर को लकड़ी के पट्टे पर लाल कपड़ा बिछाकर स्थापित करें और उस पर हल्दी से रंगे हुए पीले चावल की ढेरी लगाकर उसके ऊपर हकीक पत्थर की 108 मनकों की माला रखें। परिवार या व्यक्ति विशेष के आरोग्य के लिए एवं अन्य मनोकामनाओं की पूर्ति हेतु मनोकामना गुटिका रखकर हाथ में लाल पुष्प लेकर मां ब्रह्मचारिणी का ध्यान करें।

ध्यान मंत्र -

दधना कर पद्माभ्यामक्ष माला कमण्डल।
देवी प्रसीदतु मपि ब्रह्मचारिण्यनुत्तमा॥

मनोकामना गुटिका पर पुष्पांजलि अर्पित कर उसका पंचोपचार विधि से पूजन करें। तदुपरान्त दूध से निर्मित नैवेद्य मां ब्रह्मचारिणी को अर्पित करें। देशी घी से दीप प्रज्वलित रहे। हकीक की माला से 108 बार मंत्र का जाप करें - 'ॐ ब्रं ब्रह्मचारिण्यै नमः' मन्त्र पूर्ण होने पर मां से अपने अभीष्ट के लिए पूर्ण भक्ति भाव से प्रार्थना करें। तदुपरान्त मां की आरती करें तथा कीर्तन करें।

## ॐ चन्द्रघण्टा देव्यै नमः

नवरात्र के तीसरे दिन भगवती मां दुर्गा की तीसरी शक्ति भगवती चन्द्र घंटा की उपासना की जाती है। मां का यह रूप पाप- ताप एवं समस्त विघ्न बाधाओं से मुक्ति प्रदान करता है और परम शांति दायक एवं कल्याणकारी है। मां के मस्तक में घंटे की भांति अर्धचन्द्र सुशोभित है। इसीलिए मां को चन्द्र घंटा कहते हैं। कंचन तरह कांति वाली भगवती की दश विशाल भुजाएं है। दशों भुजाओं में खड्ग, वाण, तलवार, चक्र गदा, त्रिशूल आदि अस्त्र-शस्त्र शोभायमान हैं। मां सिंह पर सवार होकर मानो युद्ध के लिए उद्यत दिखती हैं।

मां की घंटे की तरह प्रचण्ड ध्वनि से असुर सदैव भयभीत रहते हैं। तीसरे दिन की पूजा अर्चना में मां चन्द्र घंटा का स्मरण करते हुए साधकजन अपना मन मणिपुर चक्र में स्थित करते हैं। उस समय मां की कृपा से साधक को आलौकिक दिव्य दर्शन एवं दृष्टि प्राप्त होती है। साधक के समस्त पाप-बंधन छूट जाते हैं। प्रेत बाधा आदि समस्याओं से भी मां साधक की रक्षा करती हैं।

साधना विधान - सबसे पहले मां चन्द्रघंटा की मूर्ति अथवा तस्वीर का लकड़ी की चौकी पर लाल वस्त्र बिछाकर श्री दुर्गा यन्त्र के साथ स्थापित करें तथा हाथ में लाल पुष्प लेकर मां चन्द्र घंटा का ध्यान करें।

ध्यान मंत्र -

पिण्डजप्रवरारूढ़ा चन्द्रकोपास्त्रकैर्युता।
प्रसादं तनुते मह्यं चन्द्रघण्टेति विश्रुता॥

ध्यान के बाद हाथ में लिए हुए पुष्प मां की तस्वीर पर अर्पण करें तथा अपनी मनोकामना की पूर्ति के लिए मां के 108 बार मंत्र जाप करें। मंत्र इस प्रकार है - ॐ चं चन्द्रघण्टाय हुं ॥ ध्यान रहे, मंत्र जाप से पहिले मां का तथा दुर्गा यंत्र सहित अखण्ड ज्योति का पंचोपचार विधि से पूजन करें। लाल पुष्प चढ़ायें तथा लाल नैवेद्य का भोग लगायें। मन्त्र पूर्ण होने पर मां की प्रार्थना करें तथा भजन कीर्तन के बाद आरती करें।

## ॐ कूष्माण्डा देव्यै नमः

नवरात्र के चौथे दिन आयु, यश, बल व ऐश्वर्य को प्रदान करने वाली भगवती कूष्माण्डा की उपासना-आराधना का विधान है। इस दिन साधक जन अपने मन को अनाहत चक्र में स्थित करके मां कूष्मांडा की कृपा प्राप्त करते हैं। मां सृष्टि की आदि स्वरूपा तथा आदि शक्ति हैं। मां के इसी रूप ने अपने 'ईषत्' हास्य से ब्रह्मांड की रचना की थी। इसी कारण मां को कूष्मांडा कहा गया है। मां का निवास सूर्य मंडल के भीतर के लोक में है। इन्हीं के तेज और प्रकाश से दशों दिशाएं प्रकाशित हैं। जब सृष्टि का अस्तित्व नहीं था चारों तरफ अंधकार ही अंधकार था, तब भगवती कूष्मांडा ने ब्रह्मांड की रचना की थी। इनकी आठ भुजाएं हैं। उनके सात भुजाओं में - कमण्डल, धनुष, बाण, कमल पुष्प कलश चक्र एवं गदा शोभायमान हैं। आठवें हाथ में जप की माला है जो अष्ट सिद्धि एवं नौ निधियों को देने वाली है। मां भगवती सिंह पर सवार हैं और इनको कुम्हड़ों की बलि अत्यन्त प्रिय है। मां पूर्ण श्रद्धा एवं भक्ति भाव से की गई साधना से तुरंत प्रसन्न होकर अपने भक्तों की सभी मनोकामनाएं पूर्ण करती हैं तथा हर प्रकार से मंगल करती हैं।

साधना विधान- सर्वप्रथम मां कूष्मांडा की मूर्ति अथवा तस्वीर को चौकी पर दुर्गा यंत्र के साथ स्थापित करें इस यंत्र के नीचे चौकी पर पीला वस्त्र बिछायें। अपने मनोरथ के लिए मनाकामना गुटिका यंत्र के साथ रखें। दीप प्रज्वलित करें तथा हाथ में पीलें पुष्प लेकर मां कूष्मांडा का ध्यान करें।

ध्यान मंत्र -

सुरा सम्पूर्ण कलशं रूधिराप्लुतमेव च।
दधाना हस्तपद्माभ्यां कूष्मांडा शुभदास्तु मे॥

ध्यान के बाद हाथ के पुष्प चौकी पर अर्पण करें तथा भगवती कूष्मांडा और यंत्र का पंचोपचार विधि से पूजन करें और पीले फल अथवा पीले मिष्ठान का भोग लगायें। इसके बाद मां का 108 बार मंत्र जाप करें - ॐ क्रीं कूष्मांडायै क्रीं ॐ। इसके बाद मां की प्रार्थना करें। कुम्हड़े की बलि भी दे सकते हैं तथा मां की आरती, कीर्तन आदि करें।

क्रमशः

# भगवती के दश महाविद्या स्वरूप

## संक्षिप्त परिचय व उपासना विधि

### ।। काली ।।

दस महाविद्याओं में काली प्रथम हैं। महाभागवत के अनुसार महाकाली ही मुख्य हैं और उन्हीं के उग्र और सौम्य दो रूपों में अनेक रूप धारण करने वाली दस महाविद्याएँ हैं। विद्यापति भगवान शिव की शक्तियाँ ये महाविद्याएँ अनंत सिद्धियाँ प्रदान करने में समर्थ हैं।

दार्शनिक दृष्टि से भी कालतत्व की प्रधानता सर्वोपरि है। इसलिए महाकाली या काली ही समस्त विद्याओं की आदि हैं अर्थात उनकी विद्यामयी विभूतियाँ ही महाविद्याएँ हैं। ऐसा लगता है कि महाकाल की प्रियतमा काली ही अपने दक्षिण और वाम रूपों में दस महाविद्याओं के नाम से विख्यात हुईं। बृहन्नीलतंत्र में कहा गया है कि रक्त और कृष्णभेद से काली ही दो रूपों में अधिष्ठित हैं।

कृष्णा का नाम 'दक्षिणा' और रक्तवर्णा का नाम 'सुंदरी' है। कालिका पुराण में कथा आती है कि एक बार हिमालय पर अवस्थित मतंग मुनि के आश्रम में जाकर देवताओं ने महामाया की स्तुति की। स्तुति से प्रसन्न होकर मतंग-वनिता के रूप में भगवती ने देवताओं को दर्शन दिया और पूछा कि तुम लोग किसकी स्तुति कर रहे हो। उसी समय देवी के शरीर से काले पहाड़ के समान वर्णवाली एक और दिव्य नारी का प्राकट्य हुआ। उस महातेजस्विनी ने स्वयं ही देवताओं की ओर से उत्तर दिया कि 'ये लोग मेरा ही स्तवन कर रहे हैं।' काजल के समान कृष्णा थीं, इसलिए उनका नाम 'काली' पड़ा।

दुर्गासप्तशती के अनुसार एक बार शुंभ-निशुंभ के अत्याचार से व्यथित होकर देवताओं ने हिमालय पर जाकर देवी सूक्त से देवी की स्तुति की, तब गौरी की देह से कौशिकी का प्राकट्य हुआ। कौशिकी के अलग होते ही अम्बा पार्वती का स्वरूप कृष्ण हो गया, जो 'काली' नाम से विख्यात हुईं। काली को नीलरूपा होने के कारण तारा भी कहते हैं। नारद-पांचरात्र के अनुसार एक बार काली के मन में आया कि वे पुनः गौरी हो जाएँ। यह सोचकर वे अंतर्धान हो गईं।

शिवजी ने नारदजी से उनका पता पूछा। नारदजी ने उनसे सुमेरु के उत्तर में देवी के प्रत्यक्ष उपस्थित होने की बात कही। शिवजी की प्रेरणा से नारदजी वहाँ गए। उन्होंने देवी से शिवजी के साथ विवाह का प्रस्ताव रखा। प्रस्ताव सुनकर देवी क्रुद्ध हो गईं और उनकी देह से एक अन्य षोडशी विग्रह प्रकट हुआ और उससे छायाविग्रह त्रिपुरभैरवी का प्राकट्य हुआ।

काली की उपासना में सम्प्रदायगत भेद हैं। प्रायः दो रूपों में इनकी उपासना का प्रचलन है। भव-बंधन-मोचन में काली की उपासना सर्वोत्कृष्ट कही जाती है। शक्ति-साधना के दो पीठों में काली की उपासना श्याम-पीठ पर करने योग्य है। भक्ति मार्ग में तो किसी भी रूप में उन महामाया की उपासना फलप्रदा है, पर सिद्धि के लिए उनकी उपासना वीरभाव से की जाती है।

साधना द्वारा जब अहंता, ममता और भेद-बुद्धि का नाश होकर साधक में पूर्ण शिशुत्व का उदय हो जाता है, तब काली का श्रीविग्रह साधक के समक्ष प्रकट हो जाता है। उस भगवती काली की छवि अवर्णनीय होती है। कज्जल के पहाड़ के समान, दिग्वसना, मुक्तकुन्तला, शव पर आरूढ़, मुण्डमालाधारिणी भगवती काली का प्रत्यक्ष दर्शन साधक को कृतार्थ कर देता है।

तांत्रिक मार्ग में यद्यपि काली की उपासना दीक्षागम्य है तथापि अनन्य शरणागति द्वारा उनकी कृपा किसी को भी प्राप्त हो सकती है। मूर्ति, मंत्र अथवा गुरुद्वारा उपदिष्ट किसी भी आधार पर भक्तिभाव से, मंत्र-जप, पूजा, होम और पुरश्चरण करने से भगवती काली प्रसन्न हो जाती हैं। उनकी प्रसन्नता से साधक को सहज ही संपूर्ण अभीष्टों की प्राप्ति हो जाती है।

मंत्र

ॐ क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं दक्षिण कालिके
क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

### ।। तारा ।।

भगवती काली को ही नीलरूपा होने के कारण तारा भी कहा गया है। वचनांतर से तारा नाम का रहस्य यह भी है कि यह सर्वदा मोक्ष देने वाली, तारने वाली हैं, इसलिए उन्हें तारा कहा जाता है। महाविद्याओं में ये द्वितीय स्थान पर परिगणित हैं। अनायास ही वाक्शक्ति प्रदान करने में समर्थ हैं, इसलिए इन्हें नील सरस्वती भी कहते हैं। भयंकर विपत्तियों से भक्तों की रक्षा करती हैं, इसलिए उग्रतारा हैं। बृहन्नील-तंत्रादि ग्रंथों में भगवती तारा के स्वरूप की विशेष चर्चा है। हयग्रीव का वध करने के लिए इन्हें नील-विग्रह प्राप्त हुआ था। ये शवरूप शिव पर प्रत्यालीन मुद्रा में आरूढ़ हैं। भगवती तारा नीलवर्ण वाली, नीलकमलों के समान तीन नेत्रों वाली तथा हाथों में कैंची, कपाल, कमल और खड्ग धारण करने वाली हैं। ये व्याघ्रचर्म में विभूषिता तथा कण्ठ में मुण्डमाला धारण करने वाली हैं। शत्रुनाश, वाक्शक्ति की प्राप्ति तथा भोग-मोक्ष की प्राप्ति के लिए तारा अथवा उग्रतारा की साधना की जाती है। रात्रिदेवी की स्वरूपा शक्ति तारा महाविद्याओं में अद्भुत प्रभावशाली और सिद्धि की अधिष्ठात्री देवी कही गई हैं। भगवती तारा के तीन रूप हैं- तारा, एकजटा और नील सरस्वती। तीनों रूपों के रहस्य, कार्य-कलाप तथा ध्यान परस्पर भिन्न हैं, किन्तु भिन्न होते हुए सबकी शक्ति समान और एक है। भगवती तारा की उपासना मुख्य रूप से तंत्रोक्त पद्धति से होती है, जिसे आगमोक्त पद्धति भी कहते हैं। इनकी उपासना से सामान्य व्यक्ति भी बृहस्पति के समान विद्वान हो जाते हैं।

भारत में सर्वप्रथम महर्षि वशिष्ठ ने तारा की आराधना की थी। इसलिए तारा को वशिष्ठाराधिता तारा भी कहा जाता है। वशिष्ठ ने पहले भगवती तारा की आराधना वैदिक रीति से करनी प्रारंभ की, जो सफल न हो सकी। वशिष्ठ को अदृश्य शक्ति से संकेत मिला कि वे तांत्रिक-पद्धति द्वारा जिसे 'चिनाचारा' कहा जाता है, उपासना करें। जब वशिष्ठ ने तांत्रिक पद्धति का आश्रय लिया, तब उन्हें सिद्धि प्राप्त हुई। यह कथा 'आचार' तंत्र में वशिष्ठ मुनि की आराधना उपाख्यान में वर्णित है। इससे यह सिद्ध होता है कि पहले चीन, तिब्बत, लद्दाख आदि में तारा की उपासना प्रचलित थी।

तारा का प्रादुर्भाव मेरु-पर्वत के पश्चिम भाग में 'चोलना' नाम की नदी के या चोलत सरोवर के तट पर हुआ था, जैसा कि स्वतंत्र तंत्र में वर्णित है -

मेरोः पश्चिमकूले नु चोत्रताख्यो ह्रदो महान्।
तत्र जज्ञे स्वयं तारा देवी नीलसरस्वती।।

'महाकाल-संहिता' के काम-कलाखण्ड में तारा-रहस्य वर्णित है, जिसमें तारारात्रि में तारा की उपासना का विशेष महत्व है। चैत्र-शुक्ल नवमी की रात्रि 'तारारात्रि' कहलाती है-

चैत्रे मासि नवम्यां तु शुक्लपक्षे तु भूपते।
क्रोधरात्रिर्महेशानि तारारूपा भविष्यति।।

(पुरश्चर्यार्णव भाग-3)

बिहार के सहरसा जिले में प्रसिद्ध 'महिषी' ग्राम में उग्रतारा का सिद्धपीठ विद्यमान है। वहाँ तारा, एकजटा तथा नीलसरस्वती की तीनों मूर्तियाँ एक साथ हैं। मध्य में बड़ी मूर्ति तथा दोनों तरफ छोटी मूर्तियाँ हैं। कहा जाता है कि महर्षि वशिष्ठ ने यहीं तारा की उपासना करके सिद्धि प्राप्त की थी। तंत्र शास्त्र में प्रसिद्ध ग्रंथ 'महाकाल-संहिता' के गुह्य-काली-खण्ड में महाविद्याओं की उपासना का विस्तृत वर्णन है। उनके अनुसार तारा का रहस्य अत्यंत चमत्कार जनक है।

मंत्र

ॐ ह्रीं स्त्रीं हूं फट् स्वाहा।

शेष पेज 14 पर

# पेज 13 का शेष

## दस महाविद्याएं :शास्त्रोक्त परिचय व उपासना की संक्षिप्त विधि

### ।। छिन्नमस्ता ।।

परिवर्तनशील जगत् का अधिपति कबंध है और उसकी शक्ति ही छिन्नमस्ता है। विश्व की वृद्धि-ह्रास तो सदैव होती रहती है। जब ह्रास की मात्रा कम और विकास की मात्रा अधिक होती है, तब भुवनेश्वरी का प्राकट्य होता है। इसके विपरीत जब निर्गम अधिक और आगम कम होता है, तब छिन्नमस्ता का प्राधान्य होता है।

भगवती छिन्नमस्ता का स्वरूप ही गोपनीय है। इसे कोई अधिकारी साधक ही जान सकता है। महाविद्याओं में इनका तीसरा स्थान है। इनके प्रादुर्भाव की कथा इस प्रकार है- एक बार भगवती भवानी अपनी सहचरी जया और विजया के साथ मंदाकिनी में स्नान करने के लिए गईं। स्नानोपरांत क्षुधाग्नि से पीड़ित होकर वे कृष्ण वर्ण की हो गईं। उस समय उनकी सहचरियों ने भी उनसे कुछ भोजन करने के लिए माँगा। देवी ने उनसे कुछ समय प्रतीक्षा करने के लिए कहा। थोड़ी देर प्रतीक्षा करने के बाद सहचरियों ने जब पुनः भोजन के लिए निवेदन किया, तब देवी ने उनसे कुछ देर और प्रतीक्षा करने के लिए कहा। इस पर सहचरियों ने देवी से विनम्र स्वर में कहा कि 'माँ तो अपने शिशुओं को भूख लगने पर अविलंब भोजन प्रदान करती है। आप हमारी उपेक्षा क्यों कर रही हैं?'

अपनी सहचरियों के मधुर वचन सुनकर कृपामयी देवी ने अपने खड्ग से अपना सिर काट दिया। कटा हुआ सिर देवी के बाएँ हाथ में आ गिरा और उनके कबंध से रक्त की तीन द्राराएँ प्रवाहित हुईं। वे दो धाराओं को अपनी दोनों सहचरियों की ओर प्रवाहित कर दीं, जिसे पीती हुई दोनों प्रसन्न होने लगीं और तीसरी धारा को देवी स्वयं पान करने लगीं। तभी से देवी छिन्नमस्ता के नाम से प्रसिद्ध हुईं।

ऐसा विधान है कि आधी रात अर्थात चतुर्थ संध्याकाल में छिन्नमस्ता की उपासना से साधक को सरस्वती सिद्ध हो जाती है। शत्रु-विजय, समूह-स्तम्भन, राज्य-प्राप्ति और दुर्लभ मोक्ष-प्राप्ति के लिए छिन्नमस्ता की उपासना अमोघ है।

छिन्नमस्ता का आध्यात्मिक स्वरूप अत्यंत महत्वपूर्ण है। छिन्न यज्ञशीर्ष की प्रतीक ये देवी श्वेतकमल-पीठ पर खड़ी हैं। दिशाएँ ही इनके वस्त्र हैं। इनकी नाभि में योनिचक्र हैं। कृष्ण (तम) और रक्त (रज) गुणों की देवियाँ इनकी सहचरियाँ हैं। ये अपना शीश काटकर भी जीवित हैं। यह अपने-आप में पूर्ण अंतर्मुखी साधना का संकेत है।

विद्वानों ने इस कथा में सिद्धि की चरम सीमा का निर्देश माना है। योगशास्त्र में तीन ग्रंथियाँ बताई गई हैं, जिनके भेदन के बाद योगी को पूर्ण सिद्धि प्राप्त होती है। इन्हें ब्रह्मग्रंथि, विष्णु ग्रंथि तथा रुद्रग्रंथि कहा गया है। मूलाधार में ब्रह्म ग्रंथि, मणिपूर में विष्णु ग्रंथि तथा आज्ञाचक्र में रुद्र ग्रंथि का स्थान है। इन ग्रंथियों के भेदन से ही अद्वैतानंद की प्राप्ति होती है। योगियों का ऐसा अनुभव है कि मणिपूर चक्र के नीचे की नाड़ियों में ही काम और रति का मूल है, उसी पर छिन्ना महाशक्ति आरूढ़ हैं, इसका ऊर्ध्व प्रवाह होने पर रुद्र ग्रंथि का भेदन होता है।

छिन्नमस्ता का वज्र वैरोचनी नाम शाक्तों, बौद्धों तथा जैनों में समान रूप से प्रचलित है। देवी की दोनों सहचरियाँ रजोगुण तथा तमोगुण की प्रतीक हैं, कमल विश्वप्रपंच हैं और कामरति चिदानन्द की स्थूलवृत्ति हैं। बृहदारण्यक की अश्वशिर-विद्या, शाक्तों की हयग्रीव विद्या तथा गाणपत्यों के छिन्न शीर्ष गणपति का रहस्य भी छिन्नमस्ता से ही संबंधित है।

हिरण्यकशिपु, वैरोचन आदि छिन्नमस्ता के ही उपासक थे। इसीलिए इन्हें वज्र वैरोचनीया कहा गया है। वैरोचन अग्नि को कहते हैं। अग्नि के स्थान मणिपूर में छिन्नमस्ता का ध्यान किया जाता है और वज्रानाड़ी में इनका प्रवाह होने से इन्हें वज्र वैरोचनीया कहते हैं। श्रीभैरवतंत्र में कहा गया है कि इनकी आराधना से साधक जीवभाव से मुक्त होकर शिवभाव को प्राप्त कर लेता है।

मंत्र

ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं वज्रवैरोचनीयं हुं हुं फट् स्वाहा।

### ।। षोडशी ।।

षोडशी माहेश्वरी शक्ति की सबसे मनोहर श्रीविग्रह वाली सिद्ध देवी हैं। महाविद्याओं में इनका चौथा स्थान है। सोलह अक्षरों के मंत्र वाली इन देवी की अंगकांति उदीयमान सूर्यमंडल की आभा की भाँति है। इनकी चार भुजाएँ एवं तीन नेत्र हैं। ये शांतमुद्रा में लेटे हुए सदाशिव पर स्थित कमल के आसन पर आसीन हैं।

इनके चारों हाथों में क्रमशः पाश, अंकुश, धनुष और बाण सुशोभित हैं। वर देने के लिए सदा-सर्वदा तत्पर भगवती का श्रीविग्रह सौम्य और हृदय दया से आपूरित है। जो इनका आश्रय ग्रहण कर लेते हैं, उनमें और ईश्वर में कोई भेद नहीं रह जाता है। वस्तुतः इनकी महिमा अवर्णनीय है।

संसार के समस्त मंत्र-तंत्र इनकी आराधना करते हैं। वेद भी इनका वर्णन करने में असमर्थ हैं। भक्तों को ये प्रसन्न होकर सब कुछ दे देती हैं, अभीष्ट तो सीमित अर्थवाच्य है।

प्रशांत हिरण्यगर्भ ही शिव हैं और उन्हीं की शक्ति षोडशी है। तंत्र शास्त्रों में षोडशी देवी को पंचवक्त्र अर्थात पाँच मुखों वाली बताया गया है। चारों दिशाओं में चार और एक ऊपर की ओर मुख होने से इन्हें पंचवक्त्रा कहा जाता है।

देवी के पाँचों मुख तत्पुरुष, सद्योजात, वामदेव, अघोर और ईशान शिव के पाँचों रूपों के प्रतीक हैं। पाँचों दिशाओं के रंग क्रमशः हरित, रक्त, धूम्र, नील और पीत होने से ये मुख भी उन्हीं रंगों के हैं। देवी के दस हाथों में क्रमशः अभय, टंक, शूल, वज्र, पाश, खड्ग, अंकुश, घंटा, नाग और अग्नि हैं। इनमें षोडश कलाएँ पूर्ण रूप से विकसित हैं, अतएव ये षोडशी कहलाती हैं।

षोडशी को श्रीविद्या भी माना जाता है। इनके ललिता, राजराजेश्वरी, महात्रिपुर सुन्दरी, बालापंचदशी आदि अनेक नाम हैं। इन्हें आद्याशक्ति माना जाता है। अन्य विद्याएँ भोग या मोक्ष में से एक ही देती हैं। ये अपने उपासक को भुक्ति और मुक्ति दोनों प्रदान करती हैं। इनके स्थूल, सूक्ष्म, पर तथा तुरीय चार रूप हैं।

एक बार पराम्बा पार्वतीजी ने भगवान शिव से पूछा- 'भगवन! आपके द्वारा प्रकाशित तंत्रशास्त्र की साधना से जीव के आधि-व्याधि, शोक-संताप, दीनता-हीनता तो दूर हो जाएँगे, किन्तु गर्भवास और मरण के असह्य दुःख की निवृत्ति तो इससे नहीं होगी। कृपा करके इस दुःख से निवृत्ति और मोक्ष पद की प्राप्ति का कोई उपाय बताइए।'

परम कल्याणमयी पराम्बा के अनुरोध पर भगवान शंकर ने षोडशी श्रीविद्या-साधना-प्रणाली को प्रकट किया। भगवान शंकराचार्य ने भी श्रीविद्या के रूप में इन्हीं षोडशी देवी की उपासना की थी। इसीलिए आज भी सभी शांकरपीठों में भगवती षोडशी राजराजेश्वरी त्रिपुरसुन्दरी की श्रीयंत्र के रूप में आराधना चली आ रही है।

भगवान शंकराचार्य ने सौंदर्यलहरी में षोडशी श्रीविद्या की स्तुति करते हुए कहा है कि 'अमृत के समुद्र में एक मणि का द्वीप है, जिसमें कल्पवृक्षों की बारी है, नवरत्नों के नौ परकोटे हैं, उस वन में चिंतामणि से निर्मित महल में ब्रह्ममय सिंहासन है, जिसमें पंचकृत्य के देवता ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र और ईश्वर आसन के पाए हैं और सदाशिव फलक हैं।

सदाशिव की नाभि से निर्गत कमल पर विराजमान भगवती षोडशी त्रिपुरसुंदरी का जो ध्यान करते हैं, वे धन्य हैं। भगवती के प्रभाव से उन्हें भोग और मोक्ष दोनों सहज ही उपलब्ध हो जाते हैं।' भैरवयामल तथा शक्तिलहरी में इनकी उपासना का विस्तृत परिचय मिलता है। दुर्वासा इनके परमाराधक थे। इनकी उपासना श्रीचक्र में होती है।

मंत्र

ऊँ ह्रीं श्री कएईल ह्रीं हसकहल ह्रीं सकल ह्रीं स्वाहा।

क्रमशः

# पेज 9 का शेष

# जय हो ! जय हो ! महिषासुमर्दिनी ...

**उस महादैत्य ने पुनः भैंसे का शरीर धारण कर लिया और पहले की ही भाँति चराचर प्राणियों सहित तीनों लोकों को व्याकुल करने लगा। राक्षस अपने सींगों से चण्डी के ऊपर पर्वतों को फेंकने लगा। देवी उछलीं और उस महादैत्य के ऊपर चढ़ गयीं। फिर अपने पैर से उसे दबाकर उन्होंने शूल से उसके कण्ठ में आघात किया। अभी आधे शरीर से ही वह बाहर निकलने पाया था कि देवी ने बहुत बड़ी तलवार से उसका मस्तक काट गिराया। सम्पूर्ण देवता अत्यंत प्रसन्न हो गये।**

गयीं। कितने ही दैत्यों के मस्तक कट-कट कर गिरने लगे।

दैत्यों की सेना में हाथी, घोड़े और असुरों के शरीरों से इतनी अधिक मात्रा में रक्तपात हुआ था कि थोड़ी ही देर में वहाँ खून की बड़ी-बड़ी नदियाँ बहने लगीं। जगदम्बा ने असुरों की विशाल सेना को क्षण भर में नष्टकर दिया - ठीक उसी तरह, जैसे तृण और काठ के भारी ढेर को आग कुछ ही क्षणों में भस्म कर देती है।

दैत्यों की सेना को इस प्रकार तहस-नहस होते देख महादैत्य सेनापति चिक्षुर क्रोध में भरकर अम्बिका देवी से युद्ध करने को आगे बढ़ा। उस राक्षस ने शूल हाथ में लिया और उसे उस महादैत्य ने भगवाती भद्रकाली के ऊपर चलाया। उस शूल को अपनी ओर आते देख देवी ने भी शूल का प्रहार किया। उससे राक्षस के शूल के सैकड़ों टुकड़े हो गये, साथ ही महादैत्य चिक्षर की भी धज्जियाँ उड़ गयीं। वह प्राणों से हाथ धो बैठा।

महिषासुर के सेनापति उस महापराक्रमी चिक्षुर के मारे जाने पर देवताओं को पीड़ा देने वाला चामर हाथी पर चढ़कर आया। उसने भी देवी के ऊपर शक्ति का प्रहार किया, किन्तु जगदम्बा ने उसे अपने हुंकार से ही आहत एवं निष्प्रभ करके तत्काल पृथ्वी पर गिरा दिया।

इस प्रकार अपनी सेना का संहार होता देख महिषासुर ने भैंसे का रूप धारण करके देवी के गणों को त्रास देना आरंभ किया। किन्हीं को सिंहनाद से, कुछ चक्कर देकर और कितनों को निःस्वास वायु के झोंके से धराशायी कर दिया।

इस प्रकार क्रोध में भरे हुए उस महादैत्य को अपनी ओर आते देख चण्डिका ने उसका वध करने के लिये महान क्रोध किया। उन्होंने पाश फेंककर उस महान असुर को बाँध लिया। उस महासंग्राम में बँध जाने पर उसने भैंसे का रूप त्याग दिया और तत्काल सिंह के रूप में प्रकट हो गया। उस अवस्था में जगदम्बा ज्यों ही उसका मस्तक काटने को उद्यत हुईं, त्यों ही वह खड्गधारी पुरुष के रूप में दिखायी देने लगा।

तब देवी ने तुरंत ही बाणों की वर्षा करके ढाल और तलवार के साथ उस पुरुष को भी बींध डाला। इतने में ही वह महान गजराज के रूप में परिणत हो गया तथा अपनी सूँड से देवी के विशाल सिंह को खींचने और गर्जने लगा। खींचते समय देवी ने तलवार से उसकी सूँड काट डाली। तब उस महादैत्य ने पुनः भैंसे का शरीर धारण कर लिया और पहले की ही भाँति चराचर प्राणियों सहित तीनों लोकों को व्याकुल करने लगा। तब क्रोध में भरी हुई जगन्माता चण्डिका बारंबार उत्तम मधु का पान करने और लाल आँखें करके हँसने लगीं। उधर वह बल और पराक्रम के पद से उन्मत्त हुआ राक्षस अपने सींगों से चण्डी के ऊपर पर्वतों को फेंकने लगा।

देवी उछलीं और उस महादैत्य के ऊपर चढ़ गयीं। फिर अपने पैर से उसे दबाकर उन्होंने शूल से उसके कण्ठ में आघात किया। उनके पैर से दबा होने पर भी महिषासुर अपने मुख से दूसरे रूप में बाहर होने लगा। अभी आधे शरीर से ही वह बाहर निकलने पाया था कि देवी ने बहुत बड़ी तलवार से उसका मस्तक काट गिराया। सम्पूर्ण देवता अत्यंत प्रसन्न हो गये। देवताओं ने दिव्य महर्षियों के साथ दुर्गादेवी का स्तवन किया। गन्धर्वराज गान तथा अप्सरायें नृत्य करने लगीं।


## हमारे प्रकाशन

**श्री शनिचरणानुरागी श्री श्री 1008 महामंडलेश्वर दाती जी महाराज राजस्थानी ने कई महत्वपूर्ण विषयों पर अनेकानेक पुस्तकों की रचना की है। उनके अनेक ग्रंथ तो अब भी अप्रकाशित पड़े हुए हैं। प्रभु की कृपा से हम उनकी निम्नलिखित पुस्तकों को प्रकाशित करने में सफल हुए हैं, जिनकी काफी दिनों से प्रतीक्षा की जा रही थी। आशा है, इन पुस्तकों से पाठकगण विशेष लाभ उठाने में सफल होंगे।**

### ज्योतिष व वास्तु

| पुस्तक का नाम | मूल्य (रु.) |
|---|---|
| सरल ज्योतिष प्रवेशिका | 200 |
| सरल गोचर प्रवेशिका | 200 |
| सरल मुहूर्त प्रवेशिका | 100 |
| सरल वास्तु प्रवेशिका | 150 |
| सरल हस्तरेखा विज्ञान प्रवेशिका | 150 |
| ताजिक ज्योतिष | 150 |
| सामान्य ज्योतिष एवं खगोल | 50 |
| शनि समग्र दर्शन (प्रथम भाग) | 200 |
| शनि समग्र दर्शन (द्वितीय भाग) | 200 |
| शनि साधना के चमत्कारिक प्रयोग | 100 |
| द्वादश भावों में श्री शनिदेव | 100 |
| क्या है शनि की साढेसाती और ढैय्या | 100 |
| शनि उपासना क्यों और कैसे? | 200 |
| शनि चरित्र गाथा व शनितीर्थ महात्म्य | 100 |
| शनि शांति के अमोघ देव अनुष्ठान | 100 |
| शनिवार व्रत विधि व कथा | 25 |
| काल सर्प योग | 100 |

### स्वास्थ्य व चिकित्सा

| पुस्तक का नाम | मूल्य (रु.) |
|---|---|
| भोग रोग योग | 200 |
| चमत्कार को नमस्कार | 100 |
| अद्भुत देसी नुसखे भाग - 1 | 100 |
| अद्भुत देसी नुसखे भाग - 2 | 200 |
| अद्भुत देसी नुसखे भाग - 3 | 200 |
| दाती गुरुमंत्र के उपाय खंड - 1 | 125 |
| दाती गुरुमंत्र के उपाय खंड - 2 | 200 |
| दाती गुरुमंत्र के उपाय खंड - 3 | 200 |
| दाती गुरुमंत्र के उपाय खंड - 4 | 200 |
| दाती गुरुमंत्र के उपाय खंड - 5 | 200 |
| ग्रह-नक्षत्र शांति द्वारा रोगोपचार | 80 |
| मंत्रों द्वारा रोगोपचार | 30 |
| आसनों द्वारा रोगोपचार | 30 |
| प्राणायाम द्वारा रोगोपचार | 25 |
| रोगोपचार में उपयोगी हस्त मुद्राएं | 30 |
| रोगोपचार में उपयोगी रत्न | 25 |
| सूर्य रश्मियों के रंगों से रोगोपचार | 20 |
| तन-मन के रोगों से मुक्ति की युक्ति | 25 |
| आसनःआरोग्यता का अनुपम साधन | 225 |
| प्राणायाम | 150 |

### अध्यात्म

| | |
|---|---|
| खुला आमंत्रण परमानन्द के लिए | 100 |
| मानुष तन दुर्लभ अति | 30 |
| हो कौन? जाओगे कहां? जानोगे कैसे? | 100 |
| जीवन शांत मन के साथ | 35 |
| तनाव मुक्त जीवन | 35 |
| गीता : मोह से मोक्ष तक की गाथा | 50 |
| लाली मेरे लाल की | 125 |
| समाधान | 150 |
| एक शाश्वत खोज | 125 |
| मर्म की बातें (I,II,III) | 75 |
| कुडलिनी जागरण | 200 |
| सफलता के सनातन सूत्र-प्रथम पुष्प | 125 |
| कार्य सफलता में बाधक तनाव | 125 |
| Living with peace of life | 35 |
| Eternal Bliss | 150 |
| Shedding of stress | 50 |
| Effectuation of Shani Adoration | 200 |
| Tiny Tips | 125 |

संपर्क करें - श्री सिद्ध शक्ति पीठ शनिधाम ट्रस्ट, श्री शनि तीर्थ क्षेत्र असोला, फतेहपुर बेरी, महरोली, नई दिल्ली-74 फोन - 26654400, 26653600, फैक्स : 26653500